श्री आनंद कल्याण

वि.सं. २०७३ - वैशाख सुद -३ • दि. २९ मई, २०१७ • अंक-६

6

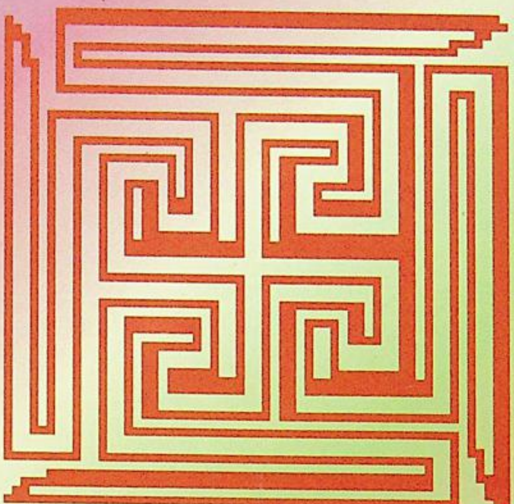

शेठ आणंदजी कल्याणजी

अहमदाबाद

श्री शत्रुंजय तीर्थाधिपति

श्री आदिनाथ दादा की ५००वीं सालगिरह

के उपलक्ष में

५००वीं सालगिरह का प्रसंग

संवत २०८७ वैशाख वद-६. सोमवार दिनांक १२-०५-२०३१

शेठ आणंदजी कल्याणजी पेढी

द्वारा प्रस्तुत लाभ लेने का सुवर्ण अवसर.....

"सुवर्ण महोत्सव प्रसंग आयोजित सर्व साधारण फंड"

१५ साल बाद आनेवाले

सुवर्ण महोत्सव में हमारा लाभ क्यों न हो ?

बस ! आज से सिर्फ १ रुपया प्रति दिन द

१ साल के रु. ३६०, १५ साल के रु.५४००.

शेठ आणंदजी कल्याणजी के नाम का एकाउन्ट पेयी चैक / नकद भारत की एच.डी.एफ.सी. बैंक की किसी भी शाखा में सेविंग्स एकाउन्ट नं. 50100165224400 में जमा किया जा सकेगा। चैक जमा कराने के बाद पे-इन-स्लीप ट्रस्ट के अहमदाबाद के पते पर अपना नाम, पता, मोबाईल नंबर, ई-मेईल सहित फोर्म भरके भेज कर दान की रसीद अवश्य प्राप्त करे। इस हेतु फोर्म शेठ आणंदजी कल्याणजी ट्रस्ट संचालित सभी तीर्थों में उपलब्ध है। इस के अलावा www.anandjikalyanjipedhi.org वेबसाईट पर से भी फोर्म डाउनलोड कर सकेंगे।

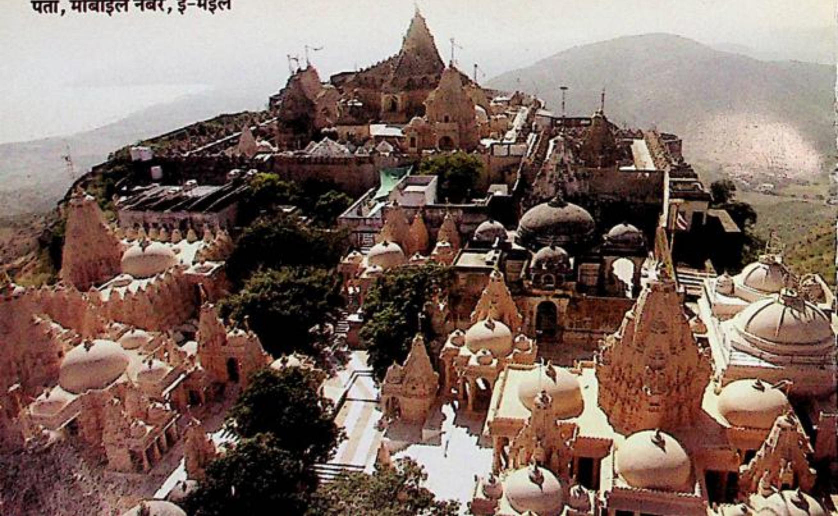

"श्री आनंद कल्याण" (त्रिमासिक पत्र)
(धार्मिक धर्मादा ट्रस्ट रजि नं. ए-१२९९/अहमदाबाद)

वर्ष : २ अंक : ६ कींमत : ₹ २० वार्षिक शुल्क : ₹ १००

नो वयणं फरुखं वइज्जा

(आचारांग २/१/६)

भाषा जितनी कोमल होगी, मन उतना ही आनंदित रहेगा।

शरीर की कोमलता और कपड़ों की मुलायमता से भी भाषा की नरमी बढ़कर है ।

जीवन व्यवहार में कठोर भाषा का त्याग करना ही समझदारी है ।

कटु वचन तो तीर से है... जहर से सने तीर से हैं... दिल को छलनी कर डालते हैं... रिश्तों में जहर घोलते है... आपस में अनबन की आग लगाते हैं । शब्दो की सुकुमारता समझनी चाहिए। शब्द तो ब्रह्म है । शब्द ही तो माध्यम है, निःशब्द की ओर आगे बढने का । शब्द ही तो सहारा है अशब्द की अंतहीन यात्रा पर चलने का ।

शब्दो को कटुता का शिकार न बनाये !

: प्रकाशक :

शेठ आणंदजी कल्याणजी

श्रेष्ठी लालभाई दलपतभाई भवन,
२५, वसंतकुंज, नवा शारदा मंदिर रोड, पालडी, अहमदाबाद-३८० ००७.

श्री आनंद कल्याण (त्रैमासिक पत्र)

वर्ष : २ | अंक : ६

प्रकाशन

वि.सं. २०७४, वैशाख शुक्ला-१५ • ता. : १०-५-२०१७, बुधवार

प्रकाशक

महेन्द्र शाह (जनरल मेनेजर)

शेठ आणंदजी कल्याणजी ट्रस्ट

श्रेष्ठी लालभाई दलपतभाई भवन,

२५, वसंतकुंज, नवा शारदा मंदिर रोड़, पालडी, अहमदाबाद-३८०००७

दूरभाष : 26644502 – 26645430

E-mail : shree_sangh@yahoo.com / info@anandjikalyanjipedhi.com

मुद्रक :

नवनीत प्रिन्टर्स (निकुंज शाह) मोबाईल : 9825261177

आणंदजी कल्याणजी पेढी की वेबसाईट का नाम

www.anandjikalyanjipedhi.org

पेढी की मोबाईल एप [Mobile App] भी

तैयार हो चुकी है । एन्ड्रोईड (Android) एवं एपल (Apple)

दोनों प्लेटफोर्म पर से डाउनलोड़ की जा सकेगी ।

E–mail : info@anandjikalyanjipedhi.org

Social Presence

Download :Anandji Kalyanji Pedhi App

पाँचवे आरे में श्री शत्रुंजय तीर्थ के हुए चार उद्धार

(१) जावडशा के द्वारा किया गया तेरहवां - उद्धार

(वि.सं. १०० अथवा विक्रम सं. १०८)

कांपिल्यपुर नगर में भावडशा नामक शेठ रहते थे। उनको भावला नामक पत्नी थी। कर्मो के उदय से सारा धन चला गया। फिर भी उन्होंने धर्म श्रद्धा में जरा भी कमी नही आने दी और धर्म आराधना की भावना बनाये रखी।

एक बार दो मुनिवर आहार पानी के लिए आये, तब भावला ने मुनिवर से पूछा हे भगवन्! हमको फिर से धन की प्राप्ति होगी, या नहीं? होगी तो किस तरह और कब होने लगेगी?

मुनिवर ने अपने ज्ञान से भविष्य के लाभ को जानकर कहा कि, "आज एक उत्तम लक्षणवाली घोडी बिकने के लिए आयेगी। उस घोडी को आप खरीद लेना, उसके प्रभाव से पुनः धनप्राप्ति होगी।"

भावला ने अपने पति से बात की, भावड़शा ने घोडी खरीद ली।

घर में एकाद पुण्यवान मनुष्य या पशु आये तो उसके पुण्य से पूरे परिवार का भाग्य बदल जाता है, जब कोई दुर्भागी बालक का जन्म या पशु आदि का जन्म हो तो उसके योग से पूरे परिवार में विपत्ति का पहाड टूट पडता है।

लक्षणवंती घोडी के योग से भावडशा की स्थिति सुधरने लगी, घोडी ने एक सुलक्षण बच्चे को जन्म दिया. यह बच्चा सुंदर लक्षण से युक्त था, इससे उसकी ख्याति चारों और फैली, वहां के राजा को पता चलने पर उन्होंने तीन लाख रुपये भावडशा को देकर वह किशोर अश्व खरीद लिया।

तीन लाख रूपये मिलने से भावडशा ने अच्छी अच्छी बहुत घोडियां खरीदी, उस घोडियों के अनेक उत्तम प्रकार के एक समान रंग और उम्र के घोडों को ले जाकर विक्रम राजा को भेट दिये।

उत्तम प्रकार के एक समान सुंदर अश्व रत्न देखकर विक्रम राजा बहुत खुश हो गया, और भावडशा को मधुमति (महुवा) सहित बार गांवों का मालिक बनाया। जब भाग्य जोर करता है, तब नहीं सोचा हुआ भी आकर मिलता है, और भाग्य बिगडता है तब चारों और से आपत्तियों की बारीश बरसती है।

भावडशा बारह गांव के अधिपति बने, भावला ने एक पुत्ररत्न को जन्म दिया। भावडशा एक पुत्ररत्न के पिता बने। उसका नाम जावडशा रखने में आया।

भावडशा का आयुष्य पूर्ण होने पर तमाम संपत्ति के मालिक जावडशा बने।

इधर बार बुरे समय के प्रभाव के कारण श्री शत्रुंजय महातीर्थ का अधिष्ठायक कपर्दीयक्ष मिथ्यात्वी हो गया। वह बहुत हिंसा करने लगा और पूरे गिरिराज पर मांस के टुकडे, रुधिर के कुंड, हड्डियों के ढेर, जहाँ तहाँ इकट्ठे होने लगे। इससे तीर्थ की बहुत आशातना होने लगी, गिरिराज के पचास योजन के अंदर कोई भी मनुष्य आये वह मृत्यु के मुख में पहुँच जाता, इससे यात्रिक आने बंद हो गये।

इस परिस्थिति में कोई प्रभावी आचार्य इस यक्ष को दूर करे और नये यक्ष की स्थापना करे तो ही यात्रा संभवित होनी थी। एक तरफ कपर्दी यक्ष का उपद्रव सताता था, वहाँ दूसरी और म्लेच्छ-मुगल सौराष्ट्र पर चढाई करने आते। धन, माल, मिलकत लूट लेते, मनुष्यों का नाश करते, मनुष्यों को उठाकर ले जाते। मुगल सैन्य ने महुवा नगर में प्रवेश किया, दूसरे कई परिवारों को कैद कर उठाया, उसमें जावडशा का परिवार भी फंस गया, सब को मुगल अपने मुल्क ले गये।

अनार्य देश में रहते हुए भी जावडशा धर्म का चुस्त पालन करता था। और जावडशा बुद्धिशाली और होंशियार होने से विविध प्रकार की बातें आदि करके म्लेच्छों को भी खुश कर दिया, इससे बादशाह ने जावडशा को स्वतंत्र रहने की और व्यापार करने की इजाजत दी।

अब जावडशा स्वतंत्र होकर व्यापर करने लगा, इससे बहुत धन की प्राप्ति हुई । बादशाह की आज्ञा लेकर उसने उस नगर में एक जिनेश्वर भगवंत का मंदिर बनाया । बहार से कोई साधर्मिक आये तो उसके सभी प्रकार के सहयोग करते थे, इससे वहां बहुत जैन इकट्ठे हुए । सब अच्छी तरह से धर्म आराधना करने लगे ।

एक बार एक मुनिवर विहार करके वहां पधारे, जावडशा ने उनका अच्छा स्वागत किया । जावडशा हंमेशा व्याख्यान सुनने जाते थे । एक बार श्री सिद्धाचल महिमा का प्रसंग चल रहा था, उसमें वर्तमान में हो रही आशातना आदि के बारे में बात हुई और मुनिने कहा कि 'पांचवें आरे में जावडशा श्री सिद्धाचलजी का उद्धार करेगा ।'

अपना नाम सुनकर जावडशा ने हाथ जोडकर मुनिवर को पूछा कि, 'हे भगवन् ! आपने जो कहा कि सिद्धाचलजी का उद्धार जावडशा करायेगा तो वह मै या दूसरा कोई जावडशा होगा ?

मुनिवर ने अपने ज्ञानबल से जानकर कहा कि, 'जब श्री सिद्धगिरिजी के अधिष्ठायक हिंसा करते हुए, पचास योजन तक सब वीरान बना डालेगें, पचास योजन के अंदर जो कोईभी जायेगा, उनको मिथ्याद्रष्टि हुआ कपर्दीयक्ष मार डालेगा, भगवान की मूर्ति पूजा रहित रहेगी । उस मुश्किल समय में तुम स्वयं अवसर्पिणी काल में श्री सिद्धाचलजी का तेरहवाँ और पांचवे आरे का पहला उद्धार करोगें । अभी ऐसी मुश्किल घडिया आ पहुँची है । इसलिए उद्धार करने के लिए तुम उद्यम करो ।'

जावडशा ने कहा हे भगवन् ! यह कठिन कार्य मेरे से कैसे हो सकेगा ?

मुनिवर ने कहां कि, 'जावड ! तुम पुण्यशाली हो, तुम श्री चक्रेश्वरी देवी की आराधना करो, वह सब मार्ग दिखायेगी, जिससे तुम्हारा कार्य सिद्ध होगा ।'

जावडशा घर जाकर उपवास सह श्री चक्रेश्वरीदेवी के ध्यान में स्थिर हो गये । एक मास के उपवास हुए, तब देवी प्रत्यक्ष हुई और कहाः श्री सिद्धाचलजी तीर्थ का उद्धार करने की तेरी भावना है, वह मैं जानती हूँ ।

तक्षशिला नगरी में जगन्मल राजा के धर्मचक्र की सभा के अगले हिस्से के तलघर में श्री आदीश्वर भगवंत की मनोहर प्रतिमा है, वह लेकर शत्रुंजय का उद्धार करके उस मूर्ति को वहाँ स्थापन करना। जगन्मल्ल तुमको प्रतिमाजी लेने की अनुमति देगा।'

यह सुनकर जावडशा खुश हुआ। देवी को प्रणाम किया, इकतीसवें दिन जावडशा ने पारणा किया। शुभ समय में जावडशा तक्षशिला नगर में गया और जगन्मल्ल राजा की सभा में जाकर उनके समक्ष महाकीमती सुंदर भेट प्रस्तुत की। विविध प्रकार के किंमती और नयनरम्य भेट देखकर राजा खुश हो गया और जावडशा को कहा कि, 'तुम को जो कोई कार्य हो कहो, दूसरे किसी से भी न हो सके ऐसा कार्य होगा, फिर भी मै खुद वह करने के लिए तैयार हूँ।'

जावडशा ने कहा, "राजन्! मुझे और कोई काम नहीं है, आपके तलघर में हमारे भगवान की मूर्ति है, उसकी मुझे जरुरत है, वह मुझे दीजिए।'

राजा ने कहा कि 'हमारे किसी तलघर में हमने तो कोई मूर्ति देखी नहीं है, फिर भी तुम कहते हो, तो वह मूर्ति कहां है? जहां भी हो वहां से खुशी से वह मूर्ति तुम ले जाओ, मेरी इजाजत है।'

जावडशा ने कहां – 'आपकी जो धर्मचक्रसभा है उसके आगे के हिस्से के तलघर में मूर्ति है, आप आज्ञा दो तो तलघर में से मूर्ति निकाल लाउं।'

राजा ने आज्ञा दी, तब जावडशा ने आदमियों के द्वारा भूमि की खुदाई करवा के तलघर में गया। वहां मुगट, कुंडल, बाजुबंध आदि से सुशोभित और अभी अभी पूजन किया हो वैसी श्री आदीश्वर भगवंत की मूर्ति बिराजमान थी।

आश्चर्य होना स्वाभाविक है तलघर में ऐसी पूजा किसने की होगी? इस मूर्ति का पूजन हंमेशा चक्रेश्वरीदेवी भावभक्ति पूर्वक करती थी। और नित्य नयी अंगरचना आदि करके रत्नालंकार अर्पित कर के अपनी भक्ति प्रदर्शित करती थी, इससे हंमेशा मूर्ति देदीप्यमान रही थी।

राजा स्वयं आये, सुंदर मूर्ति देखकर आश्चर्यचकित हुए और भाव से नतमस्तक हो गये, जगन्मल्ल सुलतान होने पर भी मूर्ति के दर्शन करके आनंदित हुआ और बोला कि, सचमुच साक्षात् जगत्कर्ता ही निकले है। जावड ! तुम वास्तव में पुण्यशाली हो, देवताएं तुम पर प्रसन्न है। इस मूर्ति को जहां ले जाना हो खुशी से ले जाओ, और अपने मनोरथ पूर्ण करो।'

सुलतान ने रेशमी वस्त्र, अलंकार आदि देकर जावडशा का सन्मान किया।

महाविकट मार्ग को भी देवी की सहायता से पूर्ण करके मूर्ति सहित जावडशा महुवा पहुंचे।

कुछ साल पहले जावडशा ने चीन आदि म्लेच्छ देशों में विविध प्रकार के माल आदि भरके बहुत जहाज भेजे थे। उस जहाजों का कुछ समाचार नही था। पुण्य से जावडशा का महुवा में भगवान के साथ आगमन हुआ और साथ ही साथ भेजे हुए तमाम जहाजों का सब माल बिक गया। उसका सोना अदि खरीदकर जहाज में भरकर जहाज वापस आ पहुँचे। यह समाचार मिलते ही जावडशा को बहुत ही आनंद हुआ। अब तीर्थाधिराज श्री शत्रुंजय उद्धार में कोई कमी नही रहेगी।

पुण्य बलवान होने से जंगम युगप्रधान श्री वज्रस्वामीजी भी विचरते हुए पधारे। जावडशा ने सुंदर स्वागतपूर्वक नगर प्रवेश करवाया।

एक दिन जावडशा ने श्री वज्रस्वामीजी को विनंती कि है, "भगवन् ! आप सहायक हो तो श्री शत्रुंजयतीर्थ का उद्धार निर्विघ्न हो सकेगा।" उस समय एक यक्ष श्री वज्रस्वामीजी को वंदन करने आया था। उसका पूर्ण वृत्तांत इस प्रकार है।

वर्तमान कपर्दीयक्ष की उत्पत्ति

महुवा नगरी में कपर्दी नमक एक बुनकर रहता था, उसको आडी और कुहाडी नामक दो स्त्रीयां थी। बुनकर अपेय पान में और अभक्ष्य भोजन में आसक्त रहता था। इससे एक दिन दोनो स्त्रियों ने बुनकर को शिक्षा दी, कपर्दी

रोष में आ गया, वह नगरी के बाहर चला गया । वहां एक मुनि देखने में आये । उन वज्रसेन मुनि ने कोमल वचन से उसको आश्वासन दिया । कपर्दी बुनकर दोनो हाथ जोड नतमस्तक खडा रहा । मुनिवर ने अपने ज्ञान से कपर्दी को सुलभबोधि जानकर उनका कुछ समय का आयुष्य जानकर धर्म का उपदेश दिया ।

कपर्दी ने कहा, 'मुझे योग्य प्रतिज्ञा कराओ ।'

गुरुमहाराज ने गंठसी का पच्चक्खाण कराया । (गंठसी का पच्चक्खाण यानी कपडे के छोर पर गांठ लगाना, जब पानी पीना हो, कुछ भी खाना हो या मुंह में कुछ डालना हो तब नवकार गिन के या 'नमो अरिहंताणं' बोलकर गांठ छोडने के बाद में ही मुंह मे कुछ डाल सकते है, खाने के बाद मुंह शुद्ध करके फिर गांठ लगाना । जब तक गांठ हो तब तक चारों आहार के त्याग का पच्चक्खाण यानी गंठसी ।)

उस दिन सर्प के जहरवाला भोजन कपर्दी के खाने में आया और मृत्यु हुई, वह व्यंतर निकाय में देव गति में उत्पन्न हुआ ।

कपर्दी की मृत्यु हुइ यह समाचार स्त्रियों ने जानें । उन्होने राजा के पास जाकर शिकायत की : 'इस साधु ने हमारे पति को कुछ खिलाकर मार डाला ।'

इससे राजा ने श्री वज्रसेन मुनि को चौकी में कैद करके बिठाया । इस तरफ व्यंतर हुआ कपर्दी ने ज्ञान से देखा, तो अपने उपकारी गुरु को संकट में फंसे देखा, उसने तुरंत उस नगर के जितनी विशाल शिला विकुर्वित की और राजा आदि लोगो से कहा, 'यह गुरु महाउपकारी है ।' आप सभी उनके पास जाओ, पांव पड कर क्षमा मांगों, वर्ना इस शिला से पूरी नगरी को चूरचूर कर दूंगा ।'

राजा आदि भयभीत हुए, गुरुमहाराज के पास जाकर और क्षमा मांगी, उन्हें बहुमानपूर्वक उपाश्रय में लाये । नये कपर्दीयक्षने गुरु को नमस्कार करके कहा कि 'हे प्रभो ! पूर्व भव में मैने बहुत पाप किये है, तो उस पाप से बचने का उपाय बताये ।'

गुरुमहाराज ने कहा : श्री सिद्धाचलजी महातीर्थ का उपासक बन। उसकी रक्षा मे सहायक बन ।

कपर्दीयक्ष ने गुरुवचन को स्वीकार किया, और कहा कि कोई कार्य हो तो बताने के लिये विनंती की ।

श्री वज्रसेन ने कहा श्री शत्रुंजय का उद्धार करने के लिये जावडशा को सहाय करना । कपर्दीयक्षने वह भी स्वीकार किया ।

कुछ समय पश्चात् श्री वज्रस्वामीजी के सान्निध्य में जावडशा ने श्री सिद्धाचलजी का संघ निकाला । शत्रुंजय पर्वत तक आते रास्ते में पुराने कपर्दीयक्ष ने बहुत उपद्रव किये पर श्री वज्रस्वामीजी ने वह सब उपद्रव दूर किये और सुखपूर्वक आ पहुंचे ।

तक्षशिला से लाई हुई प्रतिमाजी भी साथ में थी, वह गिरिराज में स्थापित करनी थी । वह प्रतिमाजी दिन में ऊपर ले जायी जाने लगी तो दूसरे दिन सुबह देखे तो नीचे आ जाती थी । इस तरह हररोज चलने लगा, इक्कीस दिन तक मिथ्यात्वी कपर्दीयक्ष ने अर्हत्, बिम्ब को नीचे उतारा और जावडशा ने इक्कीस दिन तक उपर चठाया, नये यक्ष ने कहा कि पुराना कपर्दीयक्ष इस तरह करता है, इससे अब आप और आपकी पत्नी बैलगाडी के पहिये के पीछे सो जाना और पूरा संघ काउस्सग्ग में रहे । जिससे यक्ष का जोर चल नहीं सकेगा ।

यक्ष के कहे मुताबिक किया गया । जावडशा के शील के प्रभाव से यक्ष उपद्रव नहीं कर सका । दूसरे दिन सुबह श्री वज्रस्वामीजी ने मंत्रित किये अक्षत डालकर सर्व दुष्ट देवताओं को स्थंभित कर दिया । प्रतिमाजी निर्विघ्न से उपर पहुंच गई ।

पूरा गिरिराज जो अस्थि वगैरह से अपवित्र हो गया था । वह सब अशुचि दूर करके पूरे गिरिराज को श्री शत्रुंजय नदी के जल और दूध आदि से धुलवा

के पवित्र बनाया। मंदिरो का जिर्णोद्धार प्रारम्भ करवाया। थोडे समय में सभी मंदिरो के जिर्णोद्धार हो गये ।

भगवान श्री आदिनाथ की लेपमय पूरानी मूर्ति को जब उठाने लगे तब कपर्दीयक्ष ने उसमें प्रवेश किया और महाभयंकर आवाज की । इससे पूरा गिरिराज कंपित हुआ, कहा जाता है कि इससे गिरिराज के उत्तर दक्षिण दो भाग हो गये । श्री वज्रस्वामीजी, जावडशा और और उनकी पत्नी इस तीन के अलावा सब मूर्च्छित हो गये । फिर मंत्रप्रभाव से वज्रस्वामीजी ने सबको सचेतन किया और स्थंभित हुए देवो को वज्रस्वामीजी ने मुक्त किया । नये कपर्दीयक्ष ने सभी क्षुद्र देवो को भगा दिया ।

इसके बाद बडा प्रतिष्ठा महोत्सव किया गया और मंगलकारी मुहूर्त में श्री आदीश्वर भगवंत की प्रतिमा को बिराजमान करके प्रतिष्ठा की । जावडशा और उनकी पत्नी ध्वजा चढाते समय खूब हर्ष में नाचने लगे । अतिहर्ष के कारण से हृदय बंद पडने से वे शिखर पर से नीचे गिरे । उन दोनों की मृत्यु हुई और चौथे देवलोक में देव हुए। जावडशा का पुत्र झगनाग विलाप करने लगा, तब वज्रस्वामीजी और चक्रेश्वरी देवी ने उसको सान्त्वना दी और कहा कि इसमें शोक किस बात का ? आपके माता-पिता तो उत्तम कार्य करके गये हैं, वे तो देवलोक में देव के रुप में उत्पन्न हुए हैं ।

व्यंतरदेवों ने दोनों के मृतदेह को क्षीरसमुद्र में पधाराया ।

जावडशा तक्षशिला से श्री आदिश्वर भगवंत की प्रतिमाजी श्री सिद्धगिरिजी लाये, इसमें नवलाख सोना महोरों का व्यय किया था और प्रतिष्ठा महोत्सव में दशलाख सोना महोरों का उपयोग किया । जीर्णोद्धर में तो कितना खर्च किया होगा वह पाठक इससे स्वयं समज ले । धन्य हो पांचवे आरे में प्रथम उद्धार करानेवाले जावडशा महापुरुष को ! जिसने लक्ष्मी की मूर्च्छा उतार तीर्थोद्धार का उत्तम कार्य में लक्ष्मी का सद्व्यय किया ।

(२) बाहड मंत्री का चौदहवां-उद्धार वि.सं. १२१३

एकबार कुमारपाल महाराज ने सोरठ देश के राजा समर को जीतने के लिए उदयन मंत्री को भेजा था। उस समय वे शत्रुंजय तीर्थ की यात्रा करने गये। वहां श्री ऋषभदेव भगवंत की द्रव्यपूजा करके भावपूजा (चैत्यवंदन) कर रहे थे, तब एक चूहा सुलगते दीपक की बाती काष्ठ के मंदिर में ले जा रहा देखा था, यह चूहे से बाती छुडा ली पर उदयन मंत्री को विचार आया कि काष्ठ के मंदिर का इस तरह नाश हो जाना संभव है। राज्य के पापव्यापार से मिली हुई लक्ष्मी किस काम की? युद्ध में से वापस आकर फिर से तीर्थ का जीर्णोद्धार कराउंगा, इससे मेरी लक्ष्मी से जब तक जीर्णोद्धार हो तब तक ब्रह्मचर्य का पालन करना और तांबूल का त्याग करना इस प्रकार का अभिग्रह भगवान के समक्ष किया।

यात्रा करके नीचे उतरकर प्रयाण किया। समरसेन राजा के साथ युद्ध करते समय शत्रु के बाणों से उनका शरीर जर्जरित हो गया। फिर भी उदयन मंत्री ने समरराजा के उपर बाणों के प्रहार कर उनको मार डाला और जीत हांसिल की, देश पर कब्जा किया।

मार्ग में शत्रु के बाणों के प्रहार की वेदना से उदयन मंत्री की आंखे चकराने लगी इससे छावणी में मुकाम करने के लिए रुक गए। उपचार करने पर भी अच्छा नही हुआ, तब उदयन मंत्री ने अपने परिवार से कहा कि मेरी मृत्यु के समय चार बात पूरी करने की कबूलात दो तो मुझे संतोष होगा। १. छोटे पुत्र अंबड को सेनापति बनाना, २. श्री शत्रुंजय गिरिवर पर पाषाण का प्रासाद बनाना, ३. गिरनारजी पर पत्थर की सीढिया बनाना, ४. मुझे...निर्यामणा (अंतिम आराधना) कराने वाले गुरु मिले।

यह सुनकर सामंत आदि ने कहा : पहले तीन कार्य तो आपके बडे पुत्र बाहड पूर्ण करेंगे। उसमें हम साक्षी है और आपको निर्यामणा करानेवाले साधु महाराज को अभी ढूंढ लाते है।'

बाहड ने पिताजी की इच्छा पूर्ण करने की प्रतिज्ञा की, फिर वहां आसपास

में कोई मुनिवर न होने से, अभिनय में माहिर एक पुरुष को साधु का वेष पहनाकर उदयन मंत्री के पास ले जाकर निर्यामणा करायी। मंत्री सभी प्राणियों के साथ क्षमापना करते हुए स्वर्ग गये। तब उस व्यक्ति ने विचार किया कि, 'जगत जिसको सलाम करता है वैसे मंत्री ने भिखारी जैसे मुझे वंदन किया, यह तो इस वेश का ही प्रभाव है, इसलिय यह वेष ही मुझे शरणभूत हो।'

फिर वह उस साधु ने सुगुरु के पास जाकर विधिपूर्वक दीक्षा ली और निर्मल संयम का पालन किया, गिरनारजी पर्वत के उपर जाकर दो महिने का अनशन कर स्वर्ग प्राप्त किया।

बाहड ने कुमारपाल, राजा की आज्ञा लेकर, गिरनारजी पर तिरेसठ लाख द्रव्य खर्च कर नई सीढिया बनवायी, फिर परदेश से कारीगरों को बुलाकर श्री शत्रुंजय पर सभी मंदिरों को पाषाण के बनाने की शुरुआत की।

श्री सिद्धगिरि की छाया (तलेटी) के पास तंबू डालकर बाहड मंत्री आदि बैठे थे। आसपास मे मालूमात होने से हर जगह से अनेक पुण्यशाली उद्धार फंड में अपने पैसे लेने के लिये विनंती करने लगे। मंत्रीश्वर लेने के लिए ना कर रहे थे। वे सब आग्रह भरी विनंती करते रहे। आखिर मंत्रीश्वरने दाक्षिण्यता से हामी भरी।

श्री संघ के दर्शनार्थ ओर पैसे देकर लाभ लेने वालों की भीड इतनी जमा हो गई कि विशाल ऐसे संघपति के तंबू में कही पर भी जगह नही दिख रही थी।

उस समय एक भीमा कुंडलिया नामक वणिक, जो मात्र छह द्रम्म की कीमत का घी लेकर वहां आया था, वह घी बाहड के सैन्य में बेचेन से उसको छः द्रम्म और एक रुपये का मुनाफा हुआ। फिर एक रुपये के पुष्प लेकर भगवान की पूजा की और वह भीमा श्रावक तंबू के द्वार तक तो आया, लेकिन मोटे और मलिन वस्त्र होने से चौकीदार ने उसे अंदर प्रवेश करने नहीं दिया। वह बैचेन होकर इधर-उधर निगाहें फेर रहा था।

जिसकी द्रष्टि चारों और घुम रही थी, वैसे बाहड मंत्री की द्रष्टि द्वार की

तरफ गई । देखने से ख्याल आया कि इसको अंदर आना है पर द्वारपाल के रोकने से वह आ नहीं पा रहा है । द्वारपाल को हुक्म किया कि उसको अंदर प्रवेश करने दो । जिससे उसने भीमा कुंडलिया को अंदर प्रविष्ट होने दिया, सभा में वह आया तो सही पर अपनी हैसियत के मुताबिक इधर-उधर कही भी जगह नहीं दिखने से पहले से आए हुए लोगो के जूतों के पास एक तरफ बैठ गया ।

उस वक्त उदार दिल के मंत्रीश्वर ने अपने पास गादी के उपर बैठने के लिए कहा मनमें उसे सकुचाया हुआ देखकर उसका हाथ पकड कर मंत्रीश्वर ने स्वयं मलिन वस्त्र वाले भीमा कुंडलिया को अपने पास मखमल की गादी पर बिठाया । सभा मैं बैठा भीमा कुंडलीया वहां आये सधार्मिक भाईयों को पांच, दस, पच्चीस, पचास हजार रुपये देते देख कर अनुमोदना करते हुए सोचता है कि 'धन्य है, इन महानुभावों को ! इन्होनें इस महान तीर्थ के उद्धार में अपने धन का सदव्यय किया, ये असार वैसी लक्ष्मी का व्यय करके सारभूत लाभ को उपार्जित कर रहे है ।"

सच्ची भावनावाले अनुमोदना करके बैठे नहीं रहते, लेकिन शक्ति के अनुसार सार्थक अमल कर दिखाते है, इस प्रकार भीमा श्रावक भी अपनी भावना से जेब में हाथ डालता है, और निकालता है, वह सोचता है कि यह लाखों और हजारों की राशि के सामने मेरे यह पैसे किस हिसाब के ? इस भावना से पशोपश में गिरे उस भीमा श्रावक को मंत्रीश्वर पूछ्ते है कि 'क्यों महानुभाव ? आपकी भी कुछ देने की भावना है क्या ?'

मंत्रीश्वर के इस प्रश्न को क्यों सुनकर निराशाभर विचार सागर में डूबे हुए लगाकर भीमा श्रावक को फिर से मंत्रीश्वर कहने लगे : इसमें विचार करने जैसा कुछ नहीं है, जिसकी जितनी शक्ति और भावना हो, वह उतना दे सकता है । वात्सल्यभाव से भरे इन वचनों से उत्साहित हुए भीमा श्रावक ने अपने जेब में जो था वह सब बहार निकालकर कहाः 'आज कलियुग में कल्पतरु समान श्री सिद्धाचल तीर्थ की यात्रा करके एक रुपये के फूल से दादा श्री

ऋषभदेव भगवान की पूजा की । नीचे आने पर तलेटी में पुण्योदय से श्री संघ के दर्शन हुए और मेरे पास केवल यह छह द्रम्म है । यही मेरी बचत है, यह मेरी संपत्ति है । मेरी इस छोटी सी राशि का स्विकार कर टीप-चंदे में लिखने की कृपा करके इस सेवक को कृतार्थ किजिए ।'

भीमा श्रावक की यह श्रेष्ठ उदारता थी । प्रसन्न चेहरे से मंत्रीश्वर ने उसी समय उसके द्रम्म स्वीकार लिये, और चंदे की सूचि में सबसे उपर पहला नाम उसका लिखा, इस से बडी रकम भरने वाले श्रीमंत लोग सोच में पड गये कि यह क्या ? लेकिन मंत्रीश्वर को कौन कुछ कह सकता था ? वे सब एक दूसरे की ओर तकते रहे ।

विचक्षण मंत्री तुरंत समझ गये और कहने लगे कि, यह मामूली राशि देनेवाले का प्रथम नाम देखकर आपका मन दुःखी हुआ है, लेकिन महानुभाव ! न्याय बुद्धि से सोचा जाय तो दिखेगा कि – आप और मैं तो करोडों, लाखों और हजारों दे रहे हैं पर अपने लिये बहुत कुछ रखकर के दे रहे है ।

जब कि इस भाग्यशाली ने तो अपने घर का सर्वस्व देकर 'दरिद्र अवस्था में दान' यह प्रथम कल्पवृक्ष होने का द्रष्टांत प्रस्तुत किया है, तो फिर पहला नाम इसका रखा जाये यह जरुरी है । मैं चाहता हूं कि यह आप स्वीकार करेंगे । अब प्रथम नामवाले सन्मान करने के क्रम में मंत्रीश्वर ने उमदा पोषाक और अलंकार (भंडारी के पास मंगवाकर) स्वीकारने के लिए भीमा से आग्रह किया, तब निःस्पृह वैसे भीमा कुंडलिया कहता है कि –

'कम पैसे देनेवाला मैं इस सन्मान आदि का अधिकारी नहीं हूं ।' मंत्रीश्वर के अत्याग्रह पर भी निःस्पृह भीमा कुंडलिया ने कुछ भी नही लिया, फिर संघ और संघपति को नमस्कार कर वह भीमा श्रावक अपने घर पर आया ।

तीव्रभाव का तात्कालिक फल :

इस तरफ भीमा श्रावक के घर में इसकी स्त्री सुबह भजन और शाम को संध्यागान के रुप में कडवे कठोर शब्द सुनाकर क्लेश पैदा करनेवाली प्रतिकूल औरत थी, वह भी आज भीमा कुंडलीया के तीव्र भावना से किये हुए धर्म के प्रभाव से एकाएक सानुकूल हो उठी, पति को आते देख खडी थी, बहुमान पूर्वक मधुर वाणी से आदर-सत्कार कर कुशल समाचार पूछ कर, गरम पानी से पैर प्रक्षालन कर आसन पर बिठाया, पडोस में से भोजन की सामग्री उधार लाकर मिष्ट भोजन बनाकर स्नेहपूर्वक पति को खिलाया ।

सरल हृदय का भीमा श्रावक संघपति की सभा में बनी हुई सारी बात सरलता से पत्नी को कही, वह सुनकर परिवर्तित स्वभाववाली गृहिणी आनंदपूर्वक अनुमोदना करती है, इसके इस प्रकार के बरताव से भीमा श्रावक आश्चर्यचकित होकर बारबार सुकृत की अनुमोदना करता है, अब उस के आंगन में बंधी हुई गाय ने खूंटा तोड़ देने से खूंटे को मजबूत करके लगाने के लिए भीमा ने जमीन को जरा खोदा, इसमें से हजारों सोना महोरों से भरा हुआ चरु निकलता है, वह सोनामुहर लेकर स्त्री की अनुमति पाकर, वह संघपति के तंबू में आया और वह सब सोना मोहरे उद्धार फंड में लेने के लिए मंत्रीश्वर को विनंती करता है, तब मंत्रीश्वर कहते है, अब उद्धार फंड का कार्य समाप्त हो जाने से जरुर नहीं है । और यह लक्ष्मी तुम्हारे पुण्यप्रभाव से मिली है, तो उसका उपयोग भी तुम करो ।

मंत्रीने सुवर्ण लेने से मना किया, भीमा विनंती करके गया, तब रात्रि हुई, रात में कपर्दीयक्षने स्वप्न में भीमा को कहा कि, भीमा ! एक रुपये के पुष्प लेकर श्री आदिश्वर भगवंत की तूने पूजा की, इससे प्रसन्न होकर मैंने ही तुझे सुवर्ण का चरु दिया है, इसलिए तुम अपनी इच्छा अनुसार उसका उपयोग करो ।

सुबह भीमा ने मंत्री को बात बतायी, प्रभु की सुवर्ण रत्नों और पुष्पों से पूजा की, अपने घर आया और पुण्य कार्य में प्रवृत्त हुआ ।

दो साल बाद जब जीर्णोद्धार पूर्ण होने के समाचार मंत्री को मिले तब

सूचना देनेवाले को मंत्रीने बंधाई स्वरुप में सोने की बत्तीस जिह्वाएं दी। कुछ देर बाद दूसरे आदमी ने आकर प्रासाद में किसी कारण से दरार पड़ जाने के समाचार दिये, तब मंत्री ने उसको सुवर्ण की चोसठ जिह्वाएं दी ।

पास में बैठे लोगों ने इसका कारण पूछा, तब मंत्री ने कहा कि, 'मेरे जीते जी प्रासाद फटा वह ठीक ही हुआ, क्यूंकि मैं फिर से दूसरी बार बनवाउंगा, मेरे मरने के बाद यह मंदिर टूट पडा होता तो उसको कौन करवाता ? मेरे जीते जी यह फट गया तो अब मैं ही इसे वापस बनवाउंगा ।'

मंत्री ने शिल्पियों को प्रासाद फट जाने का कारण पूछा, शिल्पियों ने कहा कि प्रदक्षिणा-फेरीवाले प्रासाद में हवा घुस जाने से एवं निकलने की जगह न होने से हवा के जोर से प्रासाद फट गया, मंदिर यदि प्रदक्षिणा रहित बनाया जाए तो प्रासाद बनानेवाले को संतान नहीं होती है, वैसा शिल्पशास्त्र में लिखा है ।

यह सुनकर मंत्री ने कहा कि किसकी संतति कायम रही है ? इसलिए मुझे वास्तविक धर्मसंतति ही चाहिए । फिर दोनो दिवारो के बीच में मजबूत शिला लगाकर प्रासाद पूर्ण कराया, फिर से जीर्णोद्धार में मंत्री ने दो करोड सत्तानवें लाख द्रव्य खर्च किया, तीन साल में कार्य पूर्ण हुआ ।

श्री हेमचंद्राचार्य को बुलाकर धामधूम से उत्सव पूर्वक वि.सं. १२१३ में प्रतिष्ठा करायी ।

आज ही खरीदें !

गूर्जरेश्वर राजर्षि कुमारपाल द्वारा विनिर्मित तारंगा तीर्थ का उत्तंग अजितनाथ जिनालय और उसके कलावैभव, शिल्प स्थापत्य का अद्वितीय खजाना, अन्य मंदिरो में सुरक्षित नक्काशी-कलाकारी और पाषाण के अंकन अब सभी के लिए

डीवीडी के रूप में उपलब्ध है । तीर्थ की परिचय पुस्तिका के साथ डीवीडी का मूल्य रूपये १२०/-

तारंगा तीर्थ के कार्यालय से तथा पेढी के मुख्य कार्यालय से प्राप्त हो सकती है ।

शत्रुंजय के शिखर पर तोते को पूर्वभव का स्मरण

(राजस्थान के ओसवाल जैन समाज में से सर्व प्रथम बार ई.स. १८९० में M.A. करने वाले श्री गुलाबचंदजी ढड्ढा जयपुर (राजस्थान) में रहते थे उनके पुत्र श्री सिद्धराजजी ढड्ढा को चार साल की छोटी उम्र में श्री शत्रुंजय पर्वत पर सिद्धवड की छाँव में पूर्व जन्म की स्मृति हो आई थी। गुलाबचंदजी ढड्ढा ने स्वयं इस बारे में जो कहा, यहाँ प्रस्तुत है, श्री सिद्धराज ढड्ढा कांग्रेस की राजस्थान सरकार में वाणिज्य मंत्री भी रहे थे, सर्वोदयी संत श्री विनोबाजी भावे के साथ भूदान की प्रवृत्तियों में जुड कर १६/०५/१९७२ से १६/०६/१९७८ तक सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष भी रहे थे।) श्री गुलाबचंदजी के शब्दों में यह घटना सुनिये:

"मेरी मा सालों से एक पौत्र के लिए इच्छित थी, लेकिन पुत्री के जन्म से उनकी आशाएं टूट पडी, मरने से पहले पौत्र का मुँह देखने की भावना से वह जीवन जीये जा रही थी। चार साल बाद आशा की किरण दिखाई दी, और मां का हृदय उत्साहित हो गया, पर्युषण पर्व में पूजा और व्याख्यान के बाद आनंद उत्सव के लिए परिवार जनों को बुलाकर मा ने कहा 'परमात्मा ने मेरी प्रार्थना सुन ली, मेरी अंतिम इच्छा जरुर पूर्ण होगी, तब मेरा जीवन सार्थक भी होगा। आप सबको सुखी-समृद्ध देखकर मेरी आत्मा अत्यंत आनंदका अनुभव करती है, मेरी मन में मेरे पौत्र का नाम का नाम आज ही तय करने की उत्कंठा जगी है, मैं उसके मुखारविंद को तो देखूंगी तब देखूंगी पर नाम तो तय कर ही लूं।"

परिवारजन वृद्ध माता की इस आश्चर्यजनक बात सुनकर विस्मत हुए, कोई क्या कहे ? लेकिन एक १० साल की बालिका सबके बीच में आगे आकर मां की गोद में बैठ गई और कहने लगी, अम्माजी ! एक सोने की सीढी बनाकर उसके उपर आपको चढना है, वह सीढी दान में देने की और हम सबको मीठा भोजन कराना। समाज में लड्डु बांटना और मंदिरजी में पूजा कराना और हम सब श्री सिद्धाचलजी अभी जाकर आये, उसकी याद में पुत्र का नाम सिद्धाचलजी के नाम से रखना। सब इस बालिका की बात सुनकर मुग्ध हो गये। मेरी सूचनानुसार सिद्धराजकुमार नाम रखना तय हुआ।

१९०८ में मैं मुंबई मैं समेतशिखरजी का मुकदमे में रुका था और मुझे पुत्र जन्म के आनंदजनक समाचार मिले । मेरी मां के हर्ष का पार नहीं था। उनकी प्रार्थना फली, दस दिन के बाद मैं जयपुर पहुंचा, और बालक को गोद में लिया वह अत्यंत रोने लगा उसे चुप करने के हमारे सभी प्रयत्न निष्फल गये । मेरी मां ने कोई सुंदर स्तवन गाने की सूचना की और निम्न स्तवन गाया :

क्युं न भये हम मोर, विमलगिरि क्युं न भये हम मोर ?
सिद्धवड रायण रूख की शाखा, झूलत करत झकोर, विमलगिरि०
आवता संघ रचावत अंगिया, गावत गुन घम घोर, विमलगिरि०
हम भी छत्र कला करी निरखत, कट ने कर्म कठोर, विमलगिरि०
मूरत देख सदा मन हरखे, जैसे चंद्र चकोर, विमलगिरि०
श्री "रिषहेसर" दास तिहारो अरज करत कर जोड, विमलगिरि०

सिद्धवड का नाम बालक के कान में पडते ही बालक ने रोना बिलकुल बंद कर दिया और ध्यानपूर्वक पूरा स्तवन सुनने में तल्लीन हो गया । ग्यारह दिन के बालक की आंख में, मुखारविंद में, हृदय में, और मन में इस स्तवन ने ऐसी उर्मि जगाई कि जब-जब बालक अस्वस्थ होता तब यह मधुर स्तवन उसकी आत्मा की शांति के लिये संजीवनी सा बन गया ।"

सिद्धराज तीन साल का हुआ । एक दिन अपनी सोना काकी के साथ वह वालकेश्वर (मुंबई)दर्शन करने गया । मूलनायक की प्रतिमा देख सिद्धराज बोल उठा 'आदीश्वर भगवान की वह प्रतिमा तो इस प्रतिमाजी से भी बडी है ।'

सोनाकाकी - कुमार, कौन से आदीश्वर भगवान की प्रतिमा की बात कर रहा है ?

कुमार - सिद्धवड के आदीश्वर भगवान

सोनाकाकी - तुम वह कैसे जानते हो ?

कुमार - मैने उस प्रतिमा की पूजा की है ।

सोनाकाकी - झूठा कही का ! तेरे जन्म के बाद हम सिद्धाचल गये ही कब है ?

कुमार - पर मैं झूठ नहीं बोलता, मैं सच बोलता हूँ।

सोनाकाकी - मतलब कि तूने भगवान की पूजा की है ? या स्वप्न में देखा है ?

कुमार - मैंने पूजा की है।

सोनाकाकी - वह कैसे हो सकता है ? तूने कब पूजा की ?, बोल मेरे बेटे !

कुमार - पहले

सोनाकाकी - वह कैसे ?

कुमार - पूर्व जन्म में मैं तोता था।

सोनाकाकी - उस समय तूं कहां रहता था ?

कुमार - सिद्धवड में।

यह आश्चर्यजनक बात होने से, मानी नही जा रही थी और कुमार का बारबार सिद्धाचल का स्मरण झूठा मानने का कारण नही था। वह बारबार सिद्धाचल जाने के लिए जिद करता और सिद्धाचलजी में खर्च करने के लिए कुछ रुपये भी अलग से इकट्ठा करने लगा था।

इ.स. १९१२ के जनवरी में हम पालीताणा आये। सोनगढ से गिरिराज के शिखर को देख बालक उत्साह से बोल उठा कि - देखो सिद्धाचल दिखा। शिहोर स्टेशन आया और गाडी बदलने के लिए प्लेटफोर्म पर उतरे के कुमार सिद्धाचल की और देखकर गिरिराज को नमस्कार करने लगा और कहने लगा देखो ! देखो ! काका साहब ! वह काला पर्वत दिख रहा है वही है सिद्धाचल, अब जल्दी उपर जाने का मिले तो कैसा ?

पालीताणा आये और दूसरे ही दिन यात्रा के लिए गये। मेरी उपर चढ़ने की अशक्ति के कारण डोली में बैठा। मैंने कुमार को डोली में मेरे साथ बैठने के लिए विनंती की पर वह बैठा नहीं मेरे भाई की उंगली पकडकर चढने लगा।

मेरे भाई के कहने के मुताबिक रास्ते में बच्चों को उठाकर पर्वत पर ले जाने वाली महिला ने पूछा तो भी कुमार ने मना किया। एक भी बार विश्राम

किये बिना वह आनंद से उपर चढ गया । उसकी भावना देखकर उसको पहला पक्षाल, चंदनपूजा, फूलपूजा आदि का घी बोली बोलकर पूजा करायी। पूजा करते उसका आनंद अनुपम था । हम चैत्यवंदन करने बैठे तब वह काउसग्ग मैं बैठा हो वैसे बैठ गया और आसपास यात्रालुओं के आने-जाने, स्तवन की आवाज या पूजा का शोर शराबा होने पर भी आधा घंटा ध्यान में बैठा रहा।

यात्रा करके वह अत्यंत आनंदित दिखता था। हंमेशा यात्रा के लिए आने का उसने कहा और यात्रा करने के पश्चात दोपहर एक-दो बजे छोटा चार साल का वह सिद्धराज खाना खाता था। पर्वत पर तो पानी भी नहीं पीता था।

सिद्धवड-उसका प्रियस्थान देखने का तय किया। वहां उसने जिस वृक्ष पर पहले रहता था वह दिखाया और हम सबके आश्चर्य के बीच मुनिराजश्री मोहनविजयजी ने पूछा कि - इस सिद्धवड में से दूसरी कोई जगह नहीं पर जयपुर में ढद्ढाजी के वहीं जन्म लेने का क्यों पसंद किया ? इसके उत्तर में बालकने मेरी और देखकर बोला कि - जब आप और मां साहब यहां यात्रा करने आये तब मां साहब ने मुझे देखकर पूछा था कि 'तोते-तोते तुम मेरे वहां आओंगे ?' तब मैंने चोंच से हा कही थी, उस समय मैंने इनके यहां जाने की भावना की थी ।

शांतमूर्ति मुनि महाराज श्री कर्पूरविजयजी, मुनिमहाराजश्री हंसविजयजी और मुनि महाराजश्री मोहनविजयजी ने बालक की सब बातें जानकर तथा बालक के साथ बात कर कहा कि सचमुच इस को जातिस्मरण ज्ञान हुआ है।

हजारों यात्रिक भाई-बहन कुमार को देखने आते थे ।

कैसी अद्‌भूत सत्यकथा !

कैसा उस गिरिराज का महिमा !

एक तोता जैसा पक्षी, भाव से एकाद दो बार या पांच दस बार पूजा करके, मनुष्य जन्म पाकर जातिस्मरण ज्ञान प्राप्त कर लेता है यह अपने आपमें अनूठी बात है ।

श्री शत्रुंजय लघुकल्प

अईमुत्ताकेवलिणा, कहिअं सेत्तुंजतित्थ माहप्पं ।
नारयरिसिस्स पुरओ तं निसुणह भावओ भविआ ॥१॥

अर्थ : अतिमुक्तक केवली भगवंत ने जो शत्रुंजय तीर्थ का माहात्म्य नारद ऋषि के पास कहा, उसी माहात्म्य को हे भव्य जीवों ! आप भावपूर्वक सुनो ।

सेत्तुंजे पुंडरिओ सिद्धो मुणि कोडि पंच संजुतो ।
चितस्स पुण्णिमाए - सो भण्णइ तेण पुंडरिओ ॥२॥

अर्थ : चैत्र मास को पूनम के दिन श्री शत्रुंजय पर पुंडरिक स्वामी (आदीश्वर प्रभु के प्रथम गणधर) पाँच करोड, मुनियों के साथ सिद्धिपद को प्राप्त हुए, जिससे यह पुंडरिक गिरि कहा जाता है ।

नमिविनमिरायाणो सिद्धाकोडिहिं दोहिंसाहूणं ।
तह दविडवालिखिल्ला, निव्वुआ दस य कोडीओ ॥३॥

अर्थ : नमि तथा विनमि नाम के दो विद्याधर राजा दो करोड मुनियो के साथ सिद्ध हुए तथा द्राविड और वारिखिल्ल नाम के मुनि दस करोड साधु सहित मोक्षपद को प्राप्त हुए ।

पज्जुन्न संब पमुहा - अध्धुट्ठाओ कुमार कोडीओ ।
तह पंडवा वि पंच य, सिद्धिगया नारयरिसी य ॥४॥

अर्थ : प्रद्युम्न तथा शांबकुमार आदि साडे आठ करोड कुमार तथा पाँच पांडव तथा नारद ऋषि इस तीर्थ पर सिद्धिपद को पाये।

थावच्चा सुय सेलगा य, मुणिणो वि तह राममुणि ।
भरहो दसरहपुत्तो, सिद्धा वंदामि सेत्तुंजे ॥५॥

अर्थ : थावच्चापुत्र, सेलगमुनि तथा दशरथ के पुत्र रामचन्द्र और भरत भी शत्रुंजय तीर्थ के उपर मोक्ष गये, उन सबको मैं वंदन करता हूँ ।

अन्ने वि खवियमोहा, उसभाई विसालवंससंभूआ ।
जे सिद्धा सेत्तुंजे, तं नमह मुणि असंखिज्जा ॥६॥

अर्थ : ऋषभदेव आदि के उच्च कुल में उत्पन्न होने वाले दूसरे भी असंख्य मुनि जिन्होंने मोह का नाश करके शत्रुंजय महातीर्थ पर मोक्ष पाया, उन सभी को वंदना हो ।

पन्नास जोयणाइं, आसी सेत्तुंज वित्थरो मूले ।
दस जोयण सिहरतले, उच्चत्तं जोयणा अटठ ॥७॥

अर्थ : श्री शत्रुंजय गिरि (ऋषभदेव भगवान के समय में) मूल में पचास योजन के विस्तार वाला, शिखर पर दस योजन के विस्तार वाला तथा ऊँचा आठ योजन था ।

जं लहइ अन्नतित्थे, उग्गेण तवेण बंभचेरेण ।
तं लहइ पयत्तेणं, सेत्तुंजगिरिम्मि निवसंतो ॥८॥

अर्थ : अन्य तीर्थो मे उग्र तपस्या करने से तथा ब्रह्मचर्य के द्वारा जो फल मिलता है उतना फल श्री शत्रुंजय गिरिराज पर प्रयत्नपूर्वक रहने मात्र से प्राप्त हो जाता है ।

जं कोडिए पुण्णं, कामियआहारभोइया जे उ ।
तं लहई तत्थ पुण्ण, एगोववासेण सेत्तुंजे ॥९॥

अर्थ : एक करोड मनुष्यों को इच्छा अनुसार भोजन कराने से जो पुण्य होता है उतना पुण्य शत्रुंजय तीर्थ में एक उपवास करने से होता है ।

जं किंचि नाम तित्थं, सग्गे पायालि माणुसे लोए ।
तं सव्वेमेव दिट्ठं पुंडरिए वंदिए संते ॥१०॥

अर्थ : स्वर्ग में, पाताल में, तथा मनुष्य लोक में जितने नाम मात्र से भी तीर्थ है उन सभी तीर्थो का मात्र पुंडरिकगिरि को वंदन करने से वंदन होता है।

पडिलाभंते संघं, दिट्ठमदिट्ठे य साहू सेत्तुंजे ।
कोडिगुणं च अदिट्ठे दिट्ठे अ अणंतयं होई ॥११॥

अर्थ : श्री शत्रुंजय जाते समय श्री शत्रुंजय को देखे अथवा न देखे, साधु भगवंतों की भक्ति करे तो शत्रुंजय को बिना देखे करोड, गुना फल मिलता है और देखने से अनन्त गुणा फल मिलता है ।

केवलनाणुप्पती, निव्वाणं आसि जत्थ साहूणं,
पुंडरिअे वंदित्ता, सव्वे ते वंदिया तत्थ ॥१२॥

अर्थ : जिन-जिन स्थानों पर साधु भगवंतों को केवलज्ञान की प्राप्ति हुई है और जिन-जिन स्थानों पर निर्वाण को प्राप्त हुए उन सभी स्थानों को पुंडरिकगिरि को वन्दन करने से वन्दन हो जाता है ।

अट्ठावय सम्मेअे पावा चंपाई उज्जित नगे य ।
वंदिता पुण्णफलं-सयगुणं तं पि पुंडरीअे ॥१३॥

अर्थ : अष्टापद, सम्मेतशिखर, पावापुरी, चम्पापुरी तथा उज्जयंतगिरि (गिरनार) इन सभी तीर्थो को वंदन करने से जो पुण्य होता है उससे सौ गुना पुण्य मात्र पुंडरिकगिरि को वंदन करने से होता है ।

पुआकरणे पुण्णं-अेगगुणं च पडिमाअे ।
जिणभवणेण सहस्सं-णंतगुणं पालणें होई ॥१४॥

अर्थ : इस तीर्थराज का पूजन करते से एक गुना पुण्य होता है प्रतिमाजी बिराजमान करने से सो गुना पुण्य होता है, जिनमंदिर कराने से हजार गुणा पुण्य होता है तथा इस तीर्थ का रक्षण करने से अनन्त गुना पुण्य होता है।

पडिमं चेइहरं वा-सित्तुंजगिरिस्स मत्थअे, कुणइ ।
भुत्तुण भरहवासं - वसइ सग्गे निरूवसग्गे ॥१५॥

अर्थ : जे मनुष्य श्री शत्रुंजय गिरिराज के शिखर पर जिनेश्वर की प्रतिमा को बिराजमान करते है अथवा जिन चैत्य कराते है वे भरतक्षेत्र के चक्रवर्ती

होकर स्वर्ग तथा मोक्ष का सुख पाते है ।

नवकार पोरिसीओ, पुरिओम्ड्ढेगासण च आयामं ।
पुंडरीयं च सरंतो, फळवंखी कुणइ अभत्तट्ठं ॥१६॥

छट्ठ-डङ्कम-दसम-दुवालसाणं, मासद्धमासखमणाणं ।
तिगरणसुद्धो लहइ सित्तुंजं संभरंतो अ ॥१७॥

अर्थ : उत्तम फल की प्राप्ति की इच्छा वाले मनुष्य पुंडरिक गिरि का ध्यान करते हुए नवकारसी, पोरिसी, पुरिमुढ, एकासणा, आयंबिल तथा उपवास करते हैं वे अनुक्रम से दो, तीन, चार, पाँच, पंद्रह उपवास, मास क्षमण का फल प्राप्त करते है ।

छट्ठेणं भत्तेणं-अप्पाणेणं तु सत्त जत्ताई ।
जो कुणइ सेत्तंजे-तइयभवे लहइ सो मुक्खं ॥१८॥

अर्थ : जो कोई भी व्यक्ति शत्रुंजय तीर्थ पर चौविहार दो उपवास के साथ-साथ सात यात्रा करते है वे तीसरे भव में मोक्ष पद प्राप्त करते है ।

अज्ज वि दीसइ लोओ-भंत चइउण पुंडरीयनगे ।
सग्गे सुहेण वच्चइ - सीलविहूणो वि होउणं ॥१९॥

अर्थ : जैसा कि संसार में दिखता है वेसे शील रहित मनुष्य भी पुंडरिक गिरिराज पर आहार-पानी का त्याग करके अनशन करे तो सुख पूर्वक स्वर्ग में जाते हैं ।

छत्तं झय पडागं-चामर भिंगार - थालदाणेणं ।
विज्जाहरो अ हवइ - तह चक्की होई रहदाणा ॥२०॥

अर्थ : इस तीर्थ पर छत्र, ध्वजा, पताका, चामर, कलश तथा थाल का दान करते से मनुष्य विद्याधर होता है तथा रथ का दान करने से चक्रवर्ती होता है ।

दस वीस तीस चत्ता, लक्ख पन्नासा पुप्फदाणेण ।
लहइ चउत्थ छट्ठडट्ठम - दसम - दुवालसफलाई ॥२१॥

अर्थ : इस तीर्थ में दस, बीस, तीस, चालीस, पचास पुष्पों की माला चढाने से मनुष्य अनुक्रम से एक, दो, तीन, चार, पाँच उपवास का फल पाते हैं।

धूवे पक्खुववासो, मासक्खमणं कपूरधूवम्भि ।
कित्तिय मासक्खमणं, साहू पडिलाभिए लहइ ॥२२॥

अर्थ : इन तीर्थ में कृष्णागुरू वगैरह का धूप करने से पन्द्रह उपवास का, कपूर का धूप करने से मास उपवास का, साधु भगवंतों की भक्ति से कुछ एक मास के उपवास का फल मिलता है ।

न वि तं सुवण्णभूमि-भूसणदाणेण अन्नतित्थेसु ।
जं पावइ पुण्णफलं, पूआ-न्हवणेण सित्तुंजे ॥२३॥

अर्थ : दूसरे तीर्थों में सुवर्ण, भूमि तथा आभूषण का दान देने से जो पुण्य फल मिलता है वह पुण्यफल श्री शत्रुंजय तीर्थ में पूजा तथा जलाभिषेक मात्र करने से मिल जाता है ।

कंतार-चोर-सावय-समुद्द-दारिद-रोग-रिउ-रुद्दा ।
मुच्चंतिअविग्घेणं जे से सेत्तुंजं धरन्ति मणे, ॥२४॥

अर्थ : जो मनुष्य शत्रुंजय तीर्थ का मन में ध्यान धरते है उन्हे वन, चोर, सिंह, समुद्र, गरीबी, रोग, शत्रु तथा अग्नि वगैरह के भयंकर भय हानि नहीं पहुँचा सकते हैं ।

सारावलीपयन्नग-गाहाओ सुअहरेण भणिआओ ।
जो पढई गुणई निसुणई, सो लहई सित्तुंज जत्त-फलं ॥२५॥

अर्थ : श्रुतधरों की कहीं हुई तथा 'सारावली पयन्ना' में गूंथी हुई गाथा रूप 'शत्रुंजय लघुकल्प' को जो पढते है, पुनरावर्तन करते है, सुनते है वे शत्रुंजय तीर्थ की यात्रा का फल पाते हैं ।

श्री शेरीसा महातीर्थ

अहमदाबाद से २२ किलोमीटर की दूरी पर स्थित गांधीनगर जिल्ले व कलोल तहसील का छोटा सा मनोहर गाँव ! गाँव के समीप से ही नर्मदा केनाल निकलती है ।

इस्वी सन् २०११ की जनगणना के आधार पर शेरीसा गाँव की जनसंख्या ११८३ परिवार अर्थात् ६१६७ लोगों की है । उस में स्त्री-पुरुष की संख्या लगभग समान ही है । जाति अनुपात लगभग शत प्रतिशत समान है । गाँव में शिक्षित लोगों की संख्या लगभग ७६ प्रतिशत है । ग्राम पंचायत प्रशासन के अधीन सरपंच द्वारा संचालित की जाती है । इस गाँव में ३ प्राथमिक शालाएँ तथा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र आदि भी हैं ।

अहमदाबाद से वडसर के मार्ग से कलोल की ओर आने से पहले ७ कि.मी. की दूरी पर अहमदाबाद के समीप का शेरीसा गाँव जैनों की प्राचीन तीर्थभूमि हैं । विशाल संकुल में शिखरबंध भव्य जिनालय, धर्मशालाएँ, उपाश्रय, पेढी-कार्यालय, प्राथमिक सुविधाएँ, भोजनशाला आदि अनवरत चालु रहती है। भव्य जिनालय देखते ही मन प्रफुल्लित हो जाये वैसा यह रमणीय तीर्थ है ।

शेरीसा नाम कैसे पडा, इस संबंध में विक्रम संवत १५६२ में कविवर श्री लावण्यसमय के द्वारा रचित 'शेरीसा तीर्थस्तवन' में कुछ सूचनाएँ मिलती हैं ।

"ए नवण पाणी विवर जाणी, खाल गयो तव विसरी,
अंतर एवडो सेरी सांकडी, नयरी कहती सेरीसा-कडी"

इस पद्य में कडी के समीप स्थित शेरीसा के परिपेक्ष्य में संकेत मिलता है, नगर की जिस संकीर्ण गली में यह जिनालय स्थित था, उसमें भगवान का अभिषेक करवाने पर उस सँकरी शेरी में चारों और पानी भर गया, इसलिये लोग उस स्थान को शेरी-सांकडी के नाम से पुकारने लगे। उसके मात्र शेरीसा नाम ही प्रचलित हो गया यद्यपि शेरीसा से कुछ किलोमीटर की दूरी पर कडी नामका गाँव बसा हुआ है लेकिन आज तो वह शहर जैसा विकसित हो गया है । वैसे देखा जाए तो शेरी-सांकडी के नाम में छुपा कोई योग इन दोनों गाँवों के बीच नहीं है ।

शेरीसा में वर्षो पहले समतल मैदान पर कुछ खैरवृक्ष और एक ओर

नवीन जिनालय के अतिरिक्त कुछ देखने को नहीं मिलता था, किंतु अब इस गाँव में पक्के घरों के निर्माण में भी वृद्धि हुई है ।

कवि इस स्थान पर सो वर्ष पहले के प्राचीन नगर का वर्णन करते हुए कहते हैं कि,

"ए नगर मोटुं, एक खोटुं, नहीं जिन प्रासाद ए"

इस संबंध में संवत्-१३८९ में रचित 'विविध तीर्थकल्प' में शेरीसा में जिनप्रतिमाएँ कब आई और कब मंदिर का निर्माण हुआ उसकी विषयवस्तु आलेखित है । उसका सारांश यह है कि, नवांगीवृत्तिकार श्री अभयदेवसूरि शाखा के आचार्य श्री देवेन्द्रसूरिजी शेरीसा पधारे तब उन्होंने एक पहाड़ी से निकाली हुई शिला से सोपारक के अंध शिल्पी-सलाट द्वारा एक मूर्ति बनवाई। इसके अलावा अन्य जगह से अन्य चोबीस प्रतिमाएँ मिली थी और श्री देवेन्द्रसूरिजी इस नगर में मंदिर निर्माण हेतु अयोध्या से चार बड़ी प्रतिमाएँ लेकर आए थे तब उनमें से एक प्रतिमा धारासेनक (कदाचित् मालवा का "धार" नामक स्थान हो) गाँव में रखी और तीन प्रतिमाएँ शेरीसा में निर्मित भव्य मंदिर में स्थापित की । इसके बाद चौथी मूर्ति गूर्जर नरेश कुमारपाल ने स्थापित करवाई थी । श्री जिनप्रभसूरिजी (संवत्-१३८९ के आसपास) प्रत्यक्ष देखे हुए दृश्य का उल्लेख करते हुए बताते हैं कि 'ये सभी प्रतिमाएँ शेरीसा गाँव के जिनमंदिर में आज भी संघ द्वारा पूजी जाती है' ।

संवत १३९३ में श्री कक्कसूरि द्वारा रचित 'नाभिनन्दन जिनोद्धार प्रबंध' में कहा गया है कि, नागेन्द्र गच्छ के श्री देवेन्द्रसूरिजी ने शेरीसा तीर्थ की स्थापना की । इस पर से बारहवीं शताब्दी में इस तीर्थ की स्थापना हो गई थी, ऐसा कहने में ऐतिहासिक द्रष्टि से कोई आपत्ति नहीं है और इसी कारण श्री जिनप्रभसूरिजी ने चौदहवीं शताब्दी में देखे हुए इस तीर्थ की वास्तविकता आलेखित की है ।

इन सभी प्रतिमाओं में मूलनायक की प्रतिमा के विषय में कहा गया है कि, **"लख लोक देखे, सहु पेखे, नाम लोडण थापन"**

प्रतिमा को हिलती डुलती देखकर लोगों ने उसका नाम "लोडण पार्श्वनाथ" रखा था । अन्य मतानुसार उस मूर्ति का एक पैर अलग बनाया गया होने से उसका यह नाम रखा गया है । जबकि एक और मतानुसार ऐसी भी कहा जाता है कि रेत से बनी यह प्रतिमा लोहे जैसी कठोर हो गई इसलिए

इसका नाम लोढण पार्श्वनाथ प्रसिद्ध हुआ । इन सभी मतों के विषय में कोई निर्णय नहीं लिया जा सकता ।

लगभग चौदहवीं शताब्दी में हुए श्री जिनतिलकसूरि द्वारा रचित 'तीर्थमाला' में मूलनायक की मूर्ति का वर्णन करते हुए लिखा है :

"शेरीसा पास छे उड्ड् काय"

अर्थात् : शेरीसा में श्री पार्श्वनाथ की मूर्ति बहुत ऊँची और भव्य है। कविवर लावण्य के समय में अर्थात् विक्रम संवत १५६२ में यहाँ जिनमंदिर विद्यमान था । इस विषय में कवि स्वयं ही शेरीसा तीर्थ की बात करते हुए कहता है कि -

"पोस कल्याणक दसम दीहाड ए,
महियल महिमा पास देखाड ए
प्रभु पास महिमा संघ आवे उमट्या,
ध्वज पूज मंगल आरती तेणे पाप पूरवनां घट्यां
संवत पन्नर बासट्ठि प्रासाद शेरीसा तणो,
लावण्यसमे इम आदि बोले, नमो नमो त्रिभुवन धणी" ।

अर्थात् लगभग सोलहवीं शताब्दी तक यह तीर्थ बहुत प्रसिद्ध हो गया था । अनेक चमत्कारों और महिमा ने लोगों को आकर्षित किया । हजारों की संख्या में श्रद्धालु लोग वहाँ आते और प्रभु के दर्शन-पूजन कर कृतार्थ होते। १३ वीं शताब्दी में गूर्जर राष्ट्र के महामंत्री श्री वस्तुपाल और तेजपाल ने यहाँ अपने अग्रज बंधु श्री मालदेव और पूर्णसिंह के कल्याणार्थ दो देवकुलिकाएँ बनवाई थी । एक देवकुलिका में नेमनाथ भगवान की सपरिकर प्रतिमा और अन्य देव कुलिका में वीरप्रभु की प्रतिमा तथा अंबिका देवी की मूर्ति जो कि वर्तमान में भी शेरीसा तीर्थ के जिनालय में स्थित है, जिसकी प्रतिष्ठा नागेन्द्रगच्छीय आचार्य श्री विजयसेनसूरिजी महाराज के वरद हस्त से करवाई थी ।

काल की वक्र द्रष्टि इस शेरीसा तीर्थ पर पडी और फलस्वरुप वि.सं. १७२१ में मूर्ति विध्वंसक यवनों ने शेरीसा पार्श्वनाथ के इस भव्य जिनालय को विध्वंस किया । उसके बाद शेरीसा नगर ध्वस्त हुआ एक भव्य सर्जन विसर्जन में परिवर्तित हुआ । नगर और देरासर ध्वस्त होने पर भी वहाँ के चतुर श्रावकों की दूरद्रष्टि व कौशल्य के कारण कुछ जिनप्रतिमाएँ भग्न होने से बच गई । युद्ध के या ऐसे किसी आततायी प्रसंग पर श्रावकों ने सभी मूर्तियाँ जमीन में

छुपा दी होगी, पश्चात् मंदिर पर विनाश के बादल छाए होंगे। उस समय गुजरात, मारवाड, मेवाड आदि प्रदेशों में बार-बार होने वाले विधर्मी आक्रमणों के कारण अनेक मंदिर टूटते थे। तब उस समय विचक्षण और भावि को समझने वाले श्रावक मंदिर से प्रतिमाएँ उत्थापित कर निकाल लेते और कहीं तहखाने में, कहीं भूमि में गहराई में गाड देते थे। इस कारण प्राचीन प्रभावशाली व तेजस्वी प्रतिमाएँ सुरक्षित रहती थीं। आज भी खुदाई करते समय गुजरात में अनेक स्थानों पर कई मूर्तियाँ निकलने के उदाहरण सामने हैं। कही, कहीं तो पूरे के पूरे मंदिर ही गडे हुए निकले हैं ऐसे भी उदाहरण हैं। ऐसा ही कुछ शेरीसा के मंदिर के साथ भी हुआ हो।

आज जो नया जैन मंदिर यहाँ बना हुआ है उसके सामने के मैदान में प्राचीन जैन मंदिर खंडहर के रूप में पड़ा था। मंदिर का अधिकांशतः भाग तो ध्वस्त हो चुका था। मात्र दीवारों का कुछ भाग बचा था। उसमें पत्थर के ढेर पड़े थे। इनके साथ ही मूर्तियाँ भी दबी पड़ी हुई थी। उन मूर्तियों में एक खंडित मूर्ति-जो ४ फीट चौड़ी, पौने चार फीट लम्बी और फणाकृति सहित ५ फीट लम्बी थी, श्यामवर्ण की दो कायोत्सर्ग मूर्तियाँ - जो २ फीट चौड़ी और साडे छः से सात फीट लम्बी थी, एक अंबिका देवी की मनोहर मूर्ति, ये पाँचो मूर्तियाँ विशिष्ट पत्थर् से बनी हुई थी, तथा एक सफेद संगमरमर की बनी हुई आदीश्वर भगवान की खंडित मूर्ति इस प्रकार कुल ६ मूर्तियाँ मिली थी।

इस खंडहर से नक्शीवाले पत्थर, खंभे, कलश आदि निकले थे वे एक ओर रख दिये गये थे। इसके अलावा दूसरी बार खुदाई करने पर जो मिला उसमें पत्थर की १५-१६ मूर्तियाँ, संगमरमर की खंडित २ मूर्तियाँ तथा संगमरमर की ही बडी मनुष्याकृति की कायोत्सर्ग मूर्ति जिसमें दोनों और २४ तीर्थंकरों की जिनप्रतिमाएँ उकेरी गई है और उस कायोत्सर्ग मूर्ति के नीचे एक लेख भी था परंतु बिलकुल घिस चुका था, जिसका बारहवीं या तेरहवीं शताब्दी का होने का अनुमान लगाया जाता है। इसके अलावा सफेद संगमरमर के परिकर की गद्दी के दो टुकडे भी निकले हैं, उनके आगे का तीसरा टुकडा नहीं मिल सका है परंतु प्राप्त दो टुकडों में आलेखित लेख इस प्रकार लिखा है :

'महामंत्री श्री वस्तुपाल-तेजपाल ने अपने भाई मालदेव और उनके पुत्र पुनसिंह के कल्याणार्थे शेरीसा महातीर्थ के पार्श्वनाथ चैत्य में श्री नेमिनाथ भगवान

का प्रतिबिंब स्थापित करवाया है और उसकी प्राणप्रतिष्ठा नागेंद्रगच्छीय श्री विजयसेनसूरि ने की है' । यह संवत १५८५ होना चाहिए, क्योंकि लेख में मात्र (५) का अंक ही दिखता है । इस लेख में शेरीसा को 'महातीर्थ' की उपाधि दी गई है व वस्तुपाल और तेजपाल जैसे महान व्यक्तियों ने यहां मूर्ति प्रतिष्ठित की है इस तीर्थभूमि का गौरव उस समय कैसा रहा होगा यह मात्र ग्रंथों के त्रुटित विषयवस्तु के आधार पर समझा जा सकता है ।

उपर्युक्त मूर्तियों के अलावा प्राचीन धर्मशाला के खंडहर से जो फणाकृतियुक्त श्री पार्श्वनाथ भगवान की विशाल प्रतिमा निकली थी, वह मूर्ति लोग वर्षों तक एक योद्धा के रूप में पूजते रहे और उसकी मानता रखते थे।

उपर्युक्त कथानक यहाँ के विशाल प्राचीन मंदिर का व उसके तीर्थ की महिमा का गुणगान करते हैं । वि.सं. १९६७ के मार्गशीर्ष महीने में यहां पूज्य शासनसम्राट आचार्य भगवंत श्री विजय नेमिसूरिश्वरजी महाराज साहब पधारे और सारी परिस्थिति समझकर उन्हों ने शीघ्र ही अपने भक्त श्रावक गोरधनभाई अमुलखभाई तथा मोहनलाल कोडिया को अपने पास बुलवाया और उनके साथ विचारविमर्श किया । गहनता से जाँच-पडताल करने पर मंदिर के पीछे के भाग से एक खंडित प्रतिमा जिसकी ऊँचाई मूलनायक भगवान जितनी ही थी, वह मिल गई । आस-पास से अन्य संप्रति महाराज के समय की श्री आदिनाथ की प्रतिमा, श्री अंबिका देवी की नयनाभिराम प्रतिमा, परिकर पट, विहारमान जिन की कायोत्सर्गआकार खंडित प्रतिमा आदि वस्तुएँ मिल गई । परिकर पट के लेख पर से वस्तुपाल मंत्री का इतिहास मिला । सूक्ष्म द्रष्टि से कोना कोंना ढूँढ लेने के बाद पूज्यश्री ने गोरधनदास से कहकर रबारी के वाडे जितनी जमीन अहमदाबाद के शेठ मनसुखलाल भगुभाई के नाम से खरीदवा ली और उसमें ये सभी प्रतिमाएँ और अन्य वस्तुएँ व्यवस्थित रख दीं । उनके सदुपदेश से स्व. शेठ श्री साराभाई डाह्याभाई ने शेरीसातीर्थ के जीर्णोद्धार का उत्तरदायित्व स्वीकार कर कार्य प्रारंभ किया था । जीर्णोद्धार के इस कार्य में तीर्थ के शिखरबंध जिनालय के निर्माण में शेठ श्री साराभाई डाह्याभाई ने उस जमाने में तीन लाख दस हजार रुपये का सद्व्यय किया था । शेठ श्री साराभाई ही इस तीर्थ के जीर्णोद्धार के मुख्य सूत्रधार थे । इस तीर्थ की स्थापना व जीर्णोद्धार आदि कार्य सुचारु रूप से हों इसलिए उन्होंने परमानंदजी कल्याणजी नामक पेढी की स्थापना की । वर्षों तक उन्होंने इस तीर्थ की तन-मन-धन से सेवा की थी । वि.सं. १९८४ (इ.सन्

१९२८) के वर्ष आषाढ़ सुद-१५ के शुभ दिन शेठश्री साराभाई डाह्याभाई ने अखिल भारतवर्ष के जैनों की प्रतिनिधिरूप शेठ आणंदजी कल्याणजी को इस तीर्थ के कार्यभार संचालन का दायित्व सौंपा। जमीन से निकली हुई इन मूर्तियों में से पाँच मूर्तियों पर शेठ जमनाभाई भगुभाई ने मोतियों का लेप करवाया था और संवत १९८८ (इ.सन्. १९३२) के माघ सुद ६ के दिन उन मूर्तियों को मंदिर में प्रस्थापित करवाया था। इस जिनालय के निर्मित होने के बाद वि.सं. २००२ (ई.सन् १९४६) में वैशाख सुद-१० के दिन परमपूज्य शासन सम्राट आचार्य भगवंत श्री विजयनेमिसूरिश्वरजी महाराज आदि की पवित्र निश्रा में उत्साहपूर्वक इस प्राचीन से नवनिर्मित जिनालय की प्रतिष्ठा करवाई गई थी।

विशाल चौगान में चारों और धर्मशाला से घिरा हुआ और बीच में खाली मैदान से विशेष शोभित हुआ यह भव्य जिनालय निश्चय ही एक कलात्मक और मनोहर मंदिर है। इसमें मुख्य गर्भगृह में भगवान शेरीसा पार्श्वनाथ की श्याम रंग की विशाल परिकरयुक्त बडी जिनप्रतिमा प्रतिष्ठित की गई और जो प्रतिमा जमीन से निकली थी उसकी प्रतिष्ठा जिनालय के भूगर्भ में की गई।

शेरीसातीर्थ में वर्तमान में निम्नोक्त स्थानों का विकास हुआ है।

पू. साधु भगवंतो के ठहरने के लिए उपाश्रय तथा पू. साध्वीजीश्री के ठहरने के लिए उपाश्रय की सुविधा है। आनेवाले यात्रीगण भाई-बहनों की सुविधा हेतु १८ ब्लोकवाली पुरानी धर्मशाला तथा १२ ब्लोकवाली नवीन धर्मशालाएँ भी हैं।

और अंत में ...

अहमदाबाद के अति समीप यह तीर्थ के होने कारण यात्री बडी संख्या में यहाँ आते हैं। दीपावली की छुट्टियाँ, ग्रीष्मकालीन अवकाश आदि में तो यहाँ धर्मशाला में जगह ही नहीं मिलती। वर्षों पहले अहमदाबाद के आसपास शेरीसा, पानसर, रांतेज, भोयणी और मातर जैसे तीर्थों की बोलबाला थी, किन्तु आज सुविधाप्रिय मानसिकता के कारण तीर्थयात्रा को पर्यटन... प्रवास या मोजमस्ती की नजरसी लग गई है तथापि अन्य तीर्थो की अपेक्षा शेरीसा की महिमा आज भी सुरक्षित है।

तीर्थ व्यवस्था, सलाह सूचन, दान-सहयोग, जीवदया, पांजरापोल, जीर्णोद्धार वगैरह प्रवृत्तियों के लिए पेढी के संपर्क सूत्र

शेठ आणंदजी कल्याणजी ट्रस्ट
श्रेष्ठि लालभाई दलपतभाई भवन,
२५, वसंतकुंज, नवा शारदा मंदिर रोड, पालडी, अहमदाबाद-३८० ०२७
फोन : (०७९) २६६४४५०२, २६६४५४३०
समय : सुबह ११ से १-३० व् दोपहर २ से ३-३०
Telefax : 079-266082441 • Email : shree_sangh@yahoo.com
(रविवार एवं अवकाश के अतिरिक्त)

शेठ आणंदजी कल्याणजी ट्रस्ट
पटनी की खड़की, झवेरीवाड, अहमदाबाद-३८० ००१
समय : सुबह ११ से १-३० व दोपहर २ से ३-३० तक
फोन : (०७९) २५३५६३१९
(रविवार एवं अवकाश के अतिरिक्त)

श्री कयवनभाई हेमेन्द्रभाई संघवी
विश्रुत जेम्स, ७०१-२ ए अमन चेम्बर्स ७वा माला,
ओपेरा हाउस, मुम्बई-४०० ००४
फोन : (०२२) ३२९६१८७०
समय : दोपहर १२ से ५ (अवकाश दिनों के अतिरिक्त)

शेठ आणंदजी कल्याणजी ट्रस्ट
श्री रजनीशांति मार्ग, पालीताणा-३६४ २७०
ओपेरा हाउस, मुम्बई-४०० ००४
Tele : 02848–252148, 253656
समय : सुबह ९ से १२.३० दोपहर २.३० से ७

और अंत में

आपको 'श्री आनंदकल्याण' का यह अंक अच्छा लगा ? क्या अच्छा लगा ? कुछ पसंद न भी आया हो तो वह भी हमें खुले मन से पर खुरदरी नहीं अपितु नरम कलम से लिख भेजें। हमें अवश्य अच्छा लगेगा। पत्रव्यवहार के लिए ई-मेईल माध्यम इच्छनीय एवं उपयुक्त रहेगा ।
anandkalyanmagazine@gmail.com

सुवर्ण महोत्स सर्व साधारण फंड का उपयोग एंव उद्देश्य

- ५०० वीं सालगिरह के प्रसंग में छोटी योजना के द्वारा हर एक श्रावक-श्राविका को सहभागी बनने का अमूल्य अवसर।
- ५०० वीं सालगिरह का अद्‌भूत एंव अद्वितीय प्रसंग आयोजन।
- इस फंड की राशि "सुवर्ण महोत्सव अवसर पर आयोजित सर्व साधारण फंड" खाते में जमा होगी।
- इस कोर्पस फंड के व्याज का उपयोग सर्व साधारण खाते में जैसे कि सात क्षेत्र, जीवदाय और अनुकम्पा इत्यादि में आवश्यकता अनुसार किया जायेगा।
- राशि हर साल रू. ३६० या एक साथ रू.५४०० दोनों विकल्प में जमा की जा सकती है।
- **Anandji Kalyanji Pedhi** मोबाईल एप्लीकेशन के द्वारा ओनलाईन भी राशि जमा की जा सकती है।

विशेष जानकारी हेतु संपर्क करे :
शेठ आणंदजी कल्याणजी, २५, वसंतकुंज, नवा शारदा मंदिर रोड,
पालडी, अमदावाद ३८०००७. फोन +91 - 79 26610387
हेल्प लाईन नंबर : + 91-93 75 500 500, + 91-93 76 500 500

Contact : info@anandjikalyanjipedhi.org
Visit : anandjikalyanjipedhi.org
Download : Social Presence
Download : Anandji Kalyanji Pedhi App

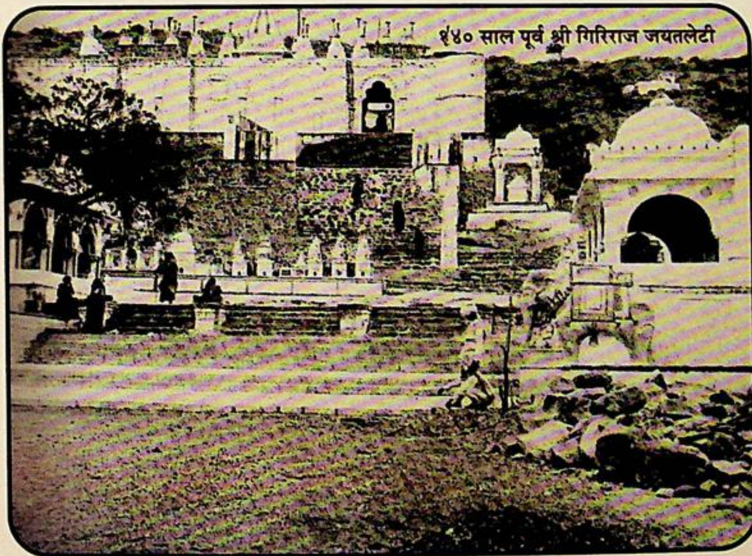

श्री शत्रुंजय तीर्थाधिपति

श्री आदिनाथ दादा की ५००वीं सालगिरह

MISSION 500

SUVARNA MAHOTSAV CELEBRATION

संवत २०८७ वैशाख वद-६.

सोमवार दिनांक १२-०५-२०३१

BOOK - POST

To,

श्री आनंद कल्याण (त्रिमासिक पत्र)

श्रेष्ठी लालभाई दलपतभाई भवन, २५, वसंतकुंज,

नवा शारदा मंदिर रोड, पालडी, अहमदाबाद - ३८० ००७.

E-mail : anandkalyanmagazine@gmail.com